MP – TET

प्राथमिक शिक्षक पात्रता परीक्षा (वर्ग - 3)

मध्यप्रदेश कर्मचारी चयन मण्डल (MPESB)

भाग - 1

बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र

विषय सूची

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ सं.
1.	विकास की अवधारणा एवं अधिगम के साथ इसका संबंध	**1**
2.	विकास को प्रभावित करने वाले कारक	**11**
3.	बाल विकास के सिद्धांत	**14**
4.	बाल विकास का अधिगम या सीखने से संबंध	**16**
5.	बालक का मानसिक स्वास्थ्य एवं व्यवहार संबंधी समस्याएँ	**19**
6.	वंशानुक्रम एव वातावरण का प्रभाव	**26**
7.	समाजीकरण प्रक्रियाएँ	**32**
8.	पियाजे, पावलव, कोहलर और थार्नडाइक : रचना एवं आलोचनात्मक स्वरूप	**37**
9.	बालकेंद्रित एवं प्रगतिशील शिक्षण की अवधारणा	**52**
10.	व्यक्तिगत विभिन्नताएँ	**56**
11.	व्यक्तित्व	**63**
12.	बुद्धि (Intelligence)	**77**
13.	सांवेगिक बुद्धि	**87**
14.	भाषा एवं विचार	**90**
15.	सामाजिक निर्माण के रूप मे लिंग और इसकी भूमिका	**96**
16.	सीखने का मूल्यांकन	**100**
17.	अधिगमकर्ता का मूल्याकंन	**111**
18.	समावेशित शिक्षा एवं विविध अधिगमकर्ताओं की समझ	**116**
19.	अधिगम कठिनाइयों, क्षति आदि से ग्रस्त बच्चों की आवश्यकताओं की पहचान	**127**
20.	प्रतिभावान, सृजनात्मक, विशेष क्षमता वाले अधिगमकर्ताओं की पहचान	**138**
21.	समस्याग्रत बालक : पहचान एवं निदानात्मक पक्ष	**145**
22.	समावेशी बच्चों हेतु निर्देशन एवं परामर्श	**151**
23.	समायोजन की संकल्पना एवं तरीके	**159**
24.	अधिगम	**166**
25.	सीखने की क्रिया : बच्चे कैसे सोचते और सीखते हैं	**175**
26.	शिक्षण और अधिगम की मूलभूत प्रक्रियाएँ	**178**
27.	छात्र : समस्या समाधानकर्ता और वैज्ञानिक	**190**
28.	शिक्षण अधिगम की व्यूह रचनाएँ या रणनीतियां	**195**
29.	संज्ञान एवं संवेग	**201**
30.	अभिप्रेरणा	**205**
31.	अभिक्षमता एवं उसका मापन	**214**
32.	स्मृति एवं विस्मृति	**217**

1 CHAPTER विकास की अवधारणा एवं अधिगम के साथ इसका संबंध

अभिवृद्धि की अवधारणा एवं अर्थ

अभिवृद्धि शब्द अभि + वृद्धि से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है – "चारों ओर फैल जाना।"

अभिवृद्धि का सामान्य अर्थ होता है आगे बढ़ना।

बालक की अभिवृद्धि के सन्दर्भ में इसे उसके शरीर के आन्तरिक एवं बाह्य अंगों के आकार, भार और इनकी कार्यक्षमता में होने वाली वृद्धि के रूप में देखा जाता है। मानव शरीर में यह वृद्धि एक आयु तक (18-20 वर्ष) ही होती है, उसके बाद इन अंगों में वृद्धि नहीं होती है अर्थात् इस आयु तक व्यक्ति पूर्ण वयस्क हो जाता है। इस वृद्धि को देखा-परखा जा सकता है और इसका मापन भी किया जा सकता है।

- यह एक **क्रमिक प्रक्रिया** है जो गर्भावस्था से लेकर परिपक्वता प्राप्त करने तक चलती है।
- **अभिवृद्धि** में शरीर एवं कोशिकाओं की **लम्बाई, भार तथा आकार** में वृद्धि होती है।
- यह प्रक्रिया **दृश्य और मापन योग्य** होती है। इसे देखा, तौला और मापा जा सकता है।
- **अभिवृद्धि एक निश्चित काल तक** ही होती है – सामान्यतः 18-20 वर्ष की आयु तक।
- **मानव शरीर की कार्यक्षमता और अभिवृद्धि की सीमा** इसकी दो विशेषताएँ हैं।
- **प्रत्येक अवस्था** की अपनी विशिष्ट विशेषताएँ होती हैं, जैसे – शिशु अवस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था आदि।
- **अभिवृद्धि के साथ विकास (Development)** की प्रक्रिया भी निरंतर चलती रहती है।

फ्रैंक के अनुसार, "अभिवृद्धि से तात्पर्य कोशिकाओं में होने वाली वृद्धि से होता है, जैसे– लम्बाई और भार में वृद्धि।"

लाल एवं जोशी के अनुसार, "मानव अभिवृद्धि से तात्पर्य उसके शरीर के बाह्य एवं आंतरिक अंगों के आकार, भार एवं कार्यक्षमता में होने वाली उस वृद्धि से है, जो गर्भकाल से परिपक्वता तक चलती है।"

विकास

विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो **सतत्** चलती है तथा जिसमें **गुणात्मक परिवर्तन** एवं **परिमाणात्मक (मात्रात्मक)** परिवर्तन दोनों सम्मिलित होते हैं।

- **गुणात्मक परिवर्तन :** कार्यशैली, कार्यक्षमता
- **परिमाणात्मक परिवर्तन :** लंबाई, वजन एवं आकार
- **सतत् :** सतत् का अर्थ है लगातार चलना अर्थात् पीछे की अवस्था पर पुनः ध्यान नहीं देना।

वृद्धि (Growth) < विकास (Development)

वृद्धि (Growth) → परिपक्वता (Maturity) के बाद रुक जाती है।

विकास (Development) → गर्भ से कब्र तक होता है। Womb to tomb

मुख्य बिंदु:

- **विकास** की प्रक्रिया में होने वाले सभी परिवर्तन एक जैसे नहीं होते –
  - ✓ प्रारंभिक अवस्था में रचनात्मक परिवर्तन होते हैं जो परिपक्वता लाते हैं।
  - ✓ उत्तरार्द्ध में विनाशात्मक परिवर्तन होते हैं जो व्यक्ति को वृद्धावस्था की ओर ले जाते हैं।
- **विकास एक क्रमिक परिवर्तन की श्रृंखला** है, जिससे व्यक्ति में नई विशेषताएँ उत्पन्न होती हैं और पुरानी समाप्त हो जाती हैं।

- **प्रौढ़ावस्था** में मनुष्य जिन गुणों से सम्पन्न होता है, वे विकास की दीर्घकालिक प्रक्रिया के परिणाम होते हैं।

हरलॉक के अनुसार- विकास केवल अभिवृद्धि तक ही सीमित नहीं है वरन् वह व्यवस्थित तथा समानुगत परिवर्तन है जिसमें कि प्रौढावस्था के लक्ष्य की ओर परिवर्तनों का प्रगतिशील क्रम निहित रहता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति में नवीन विशेषताएँ एवं योग्यताएँ प्रकट होती हैं।

मुनरों के अनुसार- विकास परिवर्तन श्रृंखला की वह अवस्था है जिसमें बच्चा भ्रूणावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक गुजरता है, विकास कहलाता है।

जेम्स ड्रेवर के अनुसार - विकास वह दशा है जो प्रगतिशील परिवर्तन के रूप में सतत् रूप से व्यक्त होती है। यह प्रगतिशील परिवर्तन किसी भी प्राणी में भ्रूणावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक होता है। यह विकास तन्त्र को सामान्य रूप में नियन्त्रित करता है। यह प्रगति का मानदण्ड है और इसका आरम्भ शून्य से होता है।

विकास की विशेषताएँ:

- विकास एक **गुणात्मक परिवर्तन** है, जिसमें अभिवृद्धि भी शामिल होती है।
- विकास **जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया** है।
- मनोविज्ञान में विकास को **क्रमिक परिवर्तनों की प्रक्रिया** माना गया है।
- विकास को **मापा नहीं**, बल्कि **अनुभव** किया जा सकता है।
- इसमें **शारीरिक के साथ-साथ मानसिक परिवर्तन** भी होते हैं।
- विकास की **गति भिन्न-भिन्न होती है**, और यह विभिन्न अवस्थाओं में अलग-अलग दर से होती है।
- इसके कारण व्यक्ति में **नवीन विशेषताएँ एवं योग्यताएँ प्रकट** होती हैं।
- यह एक **व्यापक प्रक्रिया** है, जो जीवन काल में होने वाले सभी परिवर्तनों को सम्मिलित करती है।
- विकास **वातावरण एवं वंशक्रम** दोनों से प्रभावित होता है।
- विकास की दिशा **सामान्य से विशिष्ट** की ओर होती है।
- विकास में **मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों प्रक्रियाएँ** शामिल होती हैं।

अभिवृद्धि एवं विकास मे अंतर

क्र.सं.	**अभिवृद्धि**	**विकास**
1.	अभिवृद्धि से तात्पर्य मनुष्य के आकार, बनावट एवं भार में होने वाली वृद्धि से है।	विकास से तात्पर्य मानसिक, शारीरिक, सामाजिक एवं चारित्रिक आदि व्यक्तित्वगत परिवर्तनों से होता है।
2.	अभिवृद्धि सीमित होती है तथा परिपक्वता के स्तर तक होती है।	विकास की कोई सीमा नहीं होती है। यह जन्म से लेकर मृत्यु तक चलती रहती है।
3.	अभिवृद्धि केवल मात्रात्मक होती है।	विकास मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों प्रकार का है।
4.	अभिवृद्धि क्रमानुसार एवं मापन योग्य रूप से होती है।	विकास का कोई क्रम निश्चित नहीं होता।
5.	अभिवृद्धि प्रायः शारीरिक रूप में दृष्टिगोचर होती है।	विकास दृष्ट एवं अदृश्य दोनों रूपों में होता है।
6.	अभिवृद्धि विकास को प्रभावित करती है।	विकास अभिवृद्धि से बहुत कम ही प्रभावित होता है।
7.	अभिवृद्धि केवल धनात्मक होती है।	विकास धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों होता है।
8.	अभिवृद्धि केवल आनुवंशिक प्रभाव के कारण होती है।	विकास पर आनुवंशिकता के साथ ही वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है।

नोट : सामान्यत: वृद्धि एवं विकास एक दूसरे के पूरक होते हैं ।

विकास के सिद्धान्त

- **निरन्तरता का सिद्धान्त**
  - ✓ बालक का विकास गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।
  - ✓ बालक के प्रथम तीन वर्षों में विकास तीव्र गति से होता है जबकि बाद की अवस्था में मंद हो जाता है।
- **समान प्रतिमान का सिद्धान्त**
  - ✓ इस सिद्धान्त का प्रतिपादन गैसेल व हरलॉक ने किया।
  - ✓ इस सिद्धान्त के अनुसार सभी प्राणियों का विकास अपनी जाति के अनुसार ही होता है।
- **व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धान्त**
  - ✓ इस सिद्धान्त के अनुसार बालकों का विकास एक क्रम में होता है लेकिन उनके विकास में व्यक्तिगत भिन्नता होती है।
- **विकास की विभिन्न गति का सिद्धान्त**
  - ✓ विभिन्न व्यक्तियों के विकास की गति में भिन्नता होती है जो सम्पूर्ण जीवन भर चलती है।
- **विकास क्रम का सिद्धान्त**
  - ✓ बालक का विकास एक निश्चित क्रम में होता है।
  - ✓ जैसे- शैशवावस्था → बाल्यावस्था → किशोरावस्था → युवावस्था → प्रौढ़ावस्था आदि
- **एकीकरण का सिद्धान्त**
  - ✓ बालकों का विकास पहले सम्पूर्ण अंगों का विकास होता है उसके बाद अंगों के भागों का विकास होता है। उसके बाद सभी अंगों का एकीकरण होता है।
- **सामान्य व विशिष्ट प्रतिक्रियाओं का सिद्धान्त**
  - ✓ इस सिद्धान्त के अनुसार बालक का विकास सामान्य प्रतिक्रियाओं से विशिष्ट प्रतिक्रियाओं की ओर होता है।
- **वंशानुक्रम एवं वातावरण की अन्तः क्रिया का सिद्धान्त**
  - ✓ बालक का विकास वंशानुक्रम एवं वातावरण दोनों की अन्तः क्रिया का फल है।
- **परस्पर संबंध का सिद्धान्त**
  - ✓ बालक के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक आदि सभी भागों का विकास एक-दूसरे पर निर्भर करता है।
- **विकास की दिशा का सिद्धान्त**
  - ✓ बालक का विकास सिर से पैर की ओर होता है। इसके सीरोपुच्छीय सिद्धान्त भी कहते है।
- **केन्द्रोभिमुखी विकास**
  - ✓ बालक का विकास केन्द्र से बाहर की ओर होता है।
- **वर्तुलाकार विकास का सिद्धान्त**
  - ✓ बालक का विकास एक वर्त की तरह होता है। इसे चक्रीय विकास का सिद्धान्त भी कहते है।

बाल विकास

- बाल मनोविज्ञान में बालक का जन्म से लेकर किशोरावस्था तक अध्ययन किया जाता है।
- बाल विकास में बालक का गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक अध्ययन किया जाता है। इसी कारण बाल मनोविज्ञान को बाल विकास कहा जाने लगा।

बाल विकास का संक्षिप्त इतिहास

- बाल मनोविज्ञान को बाल विकास इसलिए कहा जाने लगा कि उसमें एक पक्ष के अध्ययन की बजाय सभी पक्षों का अध्ययन किया जाता है।
- सर्वप्रथम **1629 ई.** में **कॉमेनियस** ने **'School of Infancy'** की स्थापना कर **बाल विकास का अध्ययन** शुरू किया।

- **पेस्टोलॉजी** ने बाल मनोविज्ञान पर वैज्ञानिक अध्ययन किया तथा अपने साढ़े तीन वर्षीय बेटे पर प्रयोग किये तथा **Baby Biography** की रचना की।
- **प्रेयर** ने बालको पर **Mind of Child** नामक पुस्तक की रचना की।
- 19वीं शताब्दी में **स्टेनले हॉल** ने **Child Study Society** एवं **Child Welfare Organization** नामक संस्थाओं की स्थापना अमेरिका में की ।
- **स्टेनले हॉल** को **बाल मनोविज्ञान का जनक** माना जाता है।
- **टैने** ने **1869** ई. में **Infant Child Development** नामक पुस्तक की रचना की।
- भारत में **बाल विकास अध्ययन 1930 ई.** में **कलकत्ता विश्वविद्यालय** में **ताराबाई मोडेक** के प्रयासों से किया गया।

परिभाषाएँ :-

क्रो एंड क्रो, "बाल मनोविज्ञान एक वैज्ञानिक अध्ययन है जिसमे बालक गर्भावस्था से लेकर किशोरावस्था तक अध्ययन किया जाता है।"

बर्क, "बाल विकास मनोविज्ञान की वह शाखा है जिसमें जन्म पूर्व अवस्था से परिपक्व अवस्था तक होने वाले सभी परिवर्तनों को स्पष्ट किया जाता है।"

जेम्स ड्रेवर "जन्म से परिपक्वता तक विकसित हो रहे मानव का अध्ययन किया जाता है।"

आइनजेक "बाल मनोविज्ञान का संबंध बालक में मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के विकास से है इससे गर्भकालीन, जन्म, शैशावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था और परिपक्वता तक बालक की विकास प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।"

बाल विकास की आवश्यकताएँ

- **बालकों की मनोरचना की जानकारी प्राप्त करने हेतु :** बालकों की मानसिक स्थिति, रुचियाँ, क्षमताएँ एवं समस्याओं को समझने के लिए बाल विकास का अध्ययन आवश्यक है।
- **बाल विकास की प्रक्रिया को समझने के लिए :** जन्म से लेकर वयस्कता तक बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक परिवर्तनों की समझ के लिए यह अनिवार्य है।
- **बाल निर्देशन व परामर्श मे सहायक :** सही दिशा-निर्देश एवं परामर्श देने के लिए बालक की अवस्था व विकास स्तर की जानकारी आवश्यक होती है।
- **बालकों के प्रति भविष्यवाणी करने मे सहायक :** बालक के वर्तमान व्यवहार और विकास के आधार पर उसके भविष्य के व्यवहार व व्यक्तित्व की संभावनाओं का आकलन किया जा सकता है।
- **बाल व्यवहार का मार्गान्तरिकरण व नियंत्रण मे सहायक :** बालक के व्यवहार को सकारात्मक दिशा में मोड़ने तथा अनुशासित करने के लिए उसके विकास का ज्ञान आवश्यक है।

बाल विकास के क्षेत्र

- **बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन :** शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था आदि प्रत्येक अवस्था के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व संवेगात्मक विकास का अध्ययन।
- **बाल विकास के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन :** शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक, संवेगात्मक तथा भाषायी विकास आदि सभी पहलुओं की समग्र समझ।
- **बालकों की विभिन्न असमान्यताओं का अध्ययन :** शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं व्यवहारिक विकृतियों या समस्याओं जैसे – मंद बुद्धिता, अंधापन, श्रवण बाधा, व्यवहार विकार आदि का विश्लेषण।

- **मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अध्ययन :** मानसिक संतुलन, तनाव प्रबंधन, समायोजन क्षमता, तथा सकारात्मक सोच आदि का अध्ययन।
- **बालकों की विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन :** अनुभूति, स्मृति, कल्पना, संवेग, अभिप्रेरणा, निर्णय, सोच आदि मानसिक क्रियाओं की प्रक्रिया का विश्लेषण।
- **बालकों की रुचियों का अध्ययन :** बालकों की व्यक्तिगत पसंद-नापसंद, झुकाव एवं अभिरुचियों का अध्ययन, जिससे उनकी क्षमताओं का विकास संभव हो।
- **बालकों की वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन :** बुद्धि, अभिरुचि, अभिक्षमता, स्वभाव, सीखने की गति आदि में पाई जाने वाली भिन्नताओं का मूल्यांकन।
- **बालकों के व्यक्तित्व का मूल्यांकन :** बालकों के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों जैसे – आत्मविश्वास, नेतृत्व, समायोजन, व्यवहार आदि का निरीक्षण एवं परीक्षण।

बाल विकास के अध्ययन का महत्व

- **विकासात्मक क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त होना :** बाल विकास के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि बालकों में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भाषायी और संवेगात्मक विकास कैसे क्रमिक रूप से होता है। इससे शिक्षकों, अभिभावकों और शिक्षाविदों को यह समझने में सहायता मिलती है कि किस अवस्था में बालक को किस प्रकार की सहायता और गतिविधियों की आवश्यकता है।
- **बाल पोषण विधियों का ज्ञान :** शारीरिक विकास के साथ-साथ संतुलित पोषण भी बालक की वृद्धि और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। बाल विकास के अध्ययन से बालकों की आयु, विकास स्तर और आवश्यकताओं के अनुसार उचित पोषण पद्धतियों की जानकारी प्राप्त होती है, जिससे शारीरिक दुर्बलताओं और बीमारियों से बचाव संभव हो पाता है।
- **व्यक्तिगत भिन्नताओं की जानकारी प्राप्त होना :** हर बालक अलग होता है – उसकी रुचियाँ, क्षमताएँ, सीखने की गति और सोचने की शैली भिन्न होती है। बाल विकास का अध्ययन हमें इन वैयक्तिक भिन्नताओं को पहचानने और स्वीकार करने में सहायता करता है, जिससे हर बालक को उसकी आवश्यकतानुसार शिक्षा एवं मार्गदर्शन प्रदान किया जा सके।
- **विकास की अवस्थाओं का ज्ञान :** बाल विकास अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि बालकों का विकास विभिन्न अवस्थाओं में कैसे होता है – जैसे शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था आदि। प्रत्येक अवस्था के भिन्न-भिन्न लक्षणों और आवश्यकताओं को समझकर अभिभावक और शिक्षक बालकों की उचित देखभाल कर सकते हैं।
- **बालकों के प्रशिक्षण और शिक्षण मे उपयोगी :** बाल विकास का ज्ञान शिक्षक को यह निर्णय लेने में सहायक होता है कि किस उम्र में कौन-सी विषयवस्तु, शैक्षिक विधि और गतिविधियाँ उपयुक्त होंगी। यह शिक्षण को अधिक प्रभावशाली, वैज्ञानिक और बालक-केंद्रित बनाता है।
- **बालकों के व्यक्तित्व निर्माण मे सहायक :** एक संतुलित और सकारात्मक व्यक्तित्व का निर्माण बाल्यावस्था में ही प्रारम्भ होता है। बाल विकास के अध्ययन से यह समझने में मदद मिलती है कि कौन-से कारक व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं और किस प्रकार उचित वातावरण, प्रशिक्षण, अनुशासन और अभिप्रेरणा द्वारा बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास संभव है।

विकास की अवस्थाएँ

- शैशवावस्था - जन्म से 5 वर्ष
- बाल्यावस्था - 6 वर्ष से 12 वर्ष
- किशोरावस्था - 13 वर्ष से 18 वर्ष
- प्रौढ़ावस्था - 19 वर्ष के बाद

जेम्स ट्रैवर "जन्म से परिपक्वता तक विकसित हो रहे मानव का अध्ययन किया जाता है।'

कॉलसैनिक के अनुसार

- शैशव - जन्म से 3/4 सप्ताह
- उत्तर शैशव - 2 वर्ष तक
- पूर्व बाल्यावस्था - 2 से 6 वर्ष
- मध्य बाल्यावस्था - 6 से 9 वर्ष
- उत्तर बाल्यावस्था - 9 से 12 वर्ष
- किशोरावस्था - 12 से 21 वर्ष

हरलॉक के अनुसार विकास की अवस्थाएँ

- गर्भावस्था - गर्भधारण से जन्म तक
- शैश्वावस्था - जन्म से 14 दिन तक
- बचपनावस्था - 14 दिन से 2 वर्ष तक
- पूर्व बाल्यावस्था - 3 से 6 वर्ष तक
- उत्तर बाल्यावस्था - 7 वर्ष से 12 वर्ष तक
- वयः संधि - 12 से 14 वर्ष
- पूर्व किशोरावस्था - 13-14 वर्ष से 17 वर्ष तक
- उत्तर किशोरावस्था - 18 से 21 वर्ष
- प्रौढावस्था - 21 से 40 वर्ष
- मध्यावस्था - 41 से 60 वर्ष
- वृद्धावस्था - 60 के बाद

रोस के अनुसार

- शैशवावस्था - 1 से 3 वर्ष
- पूर्व बाल्यावस्था - 3 से 6 वर्ष
- उत्तर बाल्यावस्था - 6 से 12 वर्ष
- किशोरावस्था - 12 से 18 वर्ष तक

विभिन्न अवस्थाओं का सामान्य वर्णन

- **गर्भकालीन अवस्था :** यह गर्भधारण से जन्म तक की अवस्था हैं । इस अवस्था की विकास प्रक्रियाओं के अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस अवस्था की तीन उप अवस्थाएँ हैं -
  - ✓ **बीजावस्था :** यह गर्भधारण से दो सप्ताह की अवस्था हैं ।
  - ✓ **भ्रूणावस्था :** यह दो सप्ताह से 8 सप्ताह तक की प्रक्रिया हैं । इस अवस्था का जीव भ्रूण कहलाता हैं । इसमे जीव के मुख्य अंगों का निर्माण होता हैं ।
  - ✓ **गर्भावस्था शिशु की अवस्था :** यह आठ सप्ताह से जन्म से पूर्व तक की अवस्था हैं ।
- **शैशवावस्था :** यह जन्म से 14 दिनों की अवस्था हैं । इस अवस्था मे शिशु को नवजात शिशु की संज्ञा दी जाती हैं ।
- **बचपनावस्था** : यह अवस्था से 2 सप्ताह से 2 वर्ष तक की अवस्था हैं । इस अवस्था मे बालक पूर्णत: असहाय होता हैं और अपनी आवश्यकताओं के लिए दूसरों पर निर्भर होता हैं, इस अवस्था मे विकास की गति तीव्र होती हैं ।
- **बाल्यावस्था :** यह अवस्था तीन वर्ष के प्रारम्भ से तेरह - चौदह वर्ष तक की अवस्था हैं । इस अवस्था को अध्ययन की सुविधा हेतु दो भागों मे बांटा गया हैं -
  - ✓ पूर्व बाल्यावस्था :
  - ✓ उत्तर बाल्यावस्था
  - ✓ बालक मे नवीन प्रवृत्तियाँ, जिज्ञासा, सृजनशीलता, अनुकरण इत्यादि का उदय होने लगता हैं ।
  - ✓ बालक प्रथम बार अकेले सामाजिक वातावरण मे प्रवेश करता हैं और विद्यालय जाना प्रारंभ करता हैं।
- **वय संधि या पूर्व किशोरावस्था :** उत्तर बाल्यावस्था और किशोरावस्था के मध्य का भाग । जिसमे दोनों अवस्था के दो - दो वर्ष शामिल होते हैं । इस कारण से यह अवस्था को मिश्रित अवस्था कहा जाता हैं । इस अवस्था मे यौन अंगों का विकास होता हैं । शारीरिक एवं मानसिक विकास की गति इस अवस्था मे बाल्यावस्था से तीव्र होती हैं ।

- **किशोरावस्था :** बाल्य जीवन की यह अंतिम अवस्था हैं । यह अवस्था 14-15 वर्ष से 21 वर्ष तक की अवस्था है ।
    - ✓ **पूर्व किशोरावस्था -** 17 वर्ष तक की अवस्था
    - ✓ **उत्तर किशोरावस्था -** 17 वर्ष से 21 वर्ष तक की अवस्था
    - ✓ **नोट :** इस अवस्था को कुछ विद्वान स्वर्ण आयु भी कहते हैं । इस अवस्था मे विपरीत सेक्स के लोगों के प्रति आकर्षण बढ़ जाता हैं तथा सामाजिकता और कामुकता इस अवस्था की दो मुख्य विशेषताएँ हैं ।
- **प्रौढ़ावस्था :** यह 21 वर्ष से 40 वर्ष तक अवस्था हैं। इसमे कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सकता हैं । जन जीवन की विभिन्न परिस्थितियों मे उसका स्वस्थ समायोजन हो और वह उपलब्धियों को प्राप्त कर सके ।
- **मध्यवस्था, उत्तर मध्यवस्था :** यह अवस्था 41 से 64 वर्ष तक की अवस्था हैं । इस अवस्था मे व्यक्ति के अंदर शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होते हैं । इस समय व्यक्ति सुखमय और सम्मान जनक जीवन की कमाना करता हैं ।
- **वृद्धावस्था :** यह अवस्था 65 वर्ष के आगए की अवस्था कहलाती हैं । यह जीवन की अंतिम अवस्था के रूप मे जानी जाती हैं । इस अवस्था मे याददाश्त कमजोर और शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं मे कमी आने लगती हैं ।

शैशवावस्था

- 0 से 5 वर्ष/जन्म से 5 वर्ष

थार्नडाइक "3 से 6 वर्ष की आयु का बालक प्रायः अर्द्ध स्वप्न की अवस्था में रहते है।"

फ्रायड "व्यक्ति को जो कुछ भी बनना होता है वह चार-पाँच वर्षों में बन जाता है।"

स्ट्रेंग "जीवन के प्रथम दो वर्षों में बालक अपने भावी जीवन का शिलान्यास करता है।"

गुड एनफ "व्यक्ति का जितना विकास होता है। उसका आधा 3 वर्ष में हो जाता है।"

वेलेन्टाइन,"शैशवावस्था सीखने का आदर्शकाल है।"

गैसल, "प्रारम्भिक 6 वर्षों का विकास बाद के 12 वर्ष से भी दुगुना विकास होता है।"

ब्रिजेज, "दो वर्ष की उम्र तक बालक में सभी संवेगों का विकास हो जाता है।"

क्रो एंड क्रो "20 वी शताब्दी को बालक की शताब्दी कहा"।

रूसो,"बालक के हाथ पैर व आँख उसके प्राथमिक शिक्षक होते है।"

ड्राइडेन, "सर्वप्रथम हम हमारी आदतों का निर्माण करते बाद में आदतें हमारा निर्माण करती है।"

शैशवावस्था की विशेषताएँ

- शारीरिक विकास की तीव्रता
- मानसिक विकास की तीव्रता
- कल्पना की सजीवता
- आत्म प्रेम / स्वमोह की अवस्था
- नैतिक गुणों का विकास
- मूल प्रवृत्तियों पर आधारित व्यवहार
- अनुकरण द्वारा सीखने की प्रक्रिया
- जिज्ञासा प्रवृत्ति
- दोहराने की प्रवृत्ति
- अन्तर्मुखी व्यक्तित्व
- संवेगो का प्रदर्शन
- काम शक्ति का प्रदर्शन
- खिलौनों में सर्वाधिक रूचि
- प्रिय लगने वाली अवस्था
- प्रारम्भिक विद्यालय की पूर्व तैयारी की आयु
- भाषाई कौशलों का विकास

शैशवावस्था के उपनाम

- सीखने का आदर्श काल - वेलेन्टाइन
- जीवन का महत्वपूर्ण काल
- भावी जीवन की आधारशीला
- अनुकरण द्वारा सीखने की अवस्था
- खिलौनो की आयु
- पूर्व प्राथमिक विद्यालय की आयु
- पराधीनता की अवस्था
- अतार्किक चिन्तन की अवस्था
- खतरनाक काल
- बक्की अवस्था
- बादशाह की अवस्था
- सीखने का स्वर्ण काल अवस्था
- नामकरण विस्फोट की अवस्था
- कल्पना जगत में विचरण की अवस्था

नवजात शिशुओं में प्रमुख प्रतिवर्ती अवस्थाएँ

प्रतिवर्त	**विवरण**	**विकासात्मक क्रम**
रूटिंग अवस्था	गाल को छूने पर सिर को घुमाना एवं मुख खोलना।	3 से 6 माह में विलुप्त हो जाती है।
मोरों अवस्था	यदि तीव्र शोर होता है तो बच्चा अपनी कमर को झटका देता है, हाथ-पैर फैला लेता है और फिर सिकोड़कर अपनी छाती के पास लाता है जैसे वह कुछ पकड़ रहा हो।	3 से 7 माह में विलुप्त हो जाती है (यह स्थिति शोर के प्रति अनुक्रिया को दर्शाती है)।
पकड़ना	बच्चे की हथेली को स्पर्श करने अथवा कोई वस्तु रखने पर यदि वह वस्तु पकड़ लेता है तो उसकी उंगलियाँ अत्यंत दृढ़ता से लिपट जाती हैं।	3 से 4 माह में विलुप्त हो जाती है (इसके पश्चात यह स्वैच्छिक हो जाती है)।
बेबिन्सकी अवस्था	यदि बच्चे के पैर के तलवे को ठोका जाता है तो पैर की उंगलियाँ ऊपर की ओर जाती हैं और फिर आगे की ओर मुड़ जाती हैं।	8 से 12 माह में विलुप्त हो जाती है।

बाल्यावस्था-(6 से 12 वर्ष तक)

कोल एवं ब्रूस, "बाल्यावस्था जीवन का अनोखा काल है।"

रास, "बाल्यावस्था को मिथ्या या छद्म परिपक्वता का काल कहा है।"

स्ट्रेंग"ऐसा शायद ही कोई खेल हो जिसे बालक 10 वर्ष की उम्र मे ना खेला हो।"

किल पेट्रिक "बाल्यावस्था को प्रतिद्वन्दात्मक समाजीकरण का काल कहा है।"

बर्ट "बाल्यावस्था में भ्रमण व साहसिक कार्य की प्रवृति में वृद्धि होती है।"

ब्लेयर, जोन्स,"शैक्षिक दृष्टिकोण से बाल्यावस्था से अधिक जीवन में कोई महत्वपूर्ण अवस्था नहीं है।"

एटकिन्सन"बाल्यावस्था जीवन का सबसे आनन्ददायक काल है।"

बाल्यावस्था की विशेषताएँ

- शारीरिक विकास में स्थिरता
- मानसिक विकास में स्थिरता
- वास्तविक जगत से संबंधित
- समूह भावना का विकास
- नैतिक गुणो का विकास
- संग्रह करने की प्रवृति
- रूचियों में परिवर्तन
- बहिर्मुखी व्यक्तित्व
- वैचारिक क्रिया की अवस्था
- नये कौशलों एवं क्षमताओ के विकास की वृद्धि
- स्थूल संक्रियात्मक अवस्था
- अदला-बदली की भावना
- हीन भावना का शिकार
- पक्षपात की भावना
- परिश्रम हीनता
- चोरी करना, झूठ बोलना, झगड़ा करना आदि
- जिज्ञासा की प्रबलता
- निरूद्देश्य भ्रमण की प्रवृति
- काम प्रवृति की न्यूनता

बाल्यावस्था के उपनाम

- मूर्त चिंतन की अवस्था
- प्राथमिक विद्यालय की अवस्था
- शैक्षणिक दृष्टि से महत्वपूर्ण काल
- टोली / समूह की अवस्था
- वस्तु संग्रहण की अवस्था
- मिथ्या परिपक्वता का काल
- छद्म परिपक्वता का काल
- नेता बनने की इच्छा
- वैचारिक अवस्था का काल
- संग्रह करने की प्रवृत्ति
- गंदी आयु (Dirty Age)
- सारस अवस्था

किशोरावस्था - (12 से 18 वर्ष तक)

- किशोरावस्था अंग्रेजी के Adolescence शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। जिसका अर्थ "परिपक्वता" होता है। यह शब्द लैटिन भाषा का है।
- 1904 में स्टेनले हॉल ने "Adolescence" नामक पुस्तक लिखी। स्टेनले हॉल को किशोरावस्था का जनक माना जाता है।
  - ✓ **त्वरित/आकस्मिक विकास का सिद्धान्त (स्टेनले हॉल) :** इस सिद्धान्त के अनुसार बालक-बालिकाओं में जो भी परिवर्तन होते है वे सब आकस्मिक होते है।
  - ✓ **क्रमिक विकास का सिद्धान्त (थार्नडाइक) :** इस सिद्धान्त के अनुसार किशोरावस्था में जो भी परिवर्तन होते है वे अचानक न होकर एक क्रमिक रूप में होता है।

वेलेंटाइन, "किशोरावस्था अपराध प्रवृति के विकास का नाजुक समय है।"

रॉस/जॉस,
- "किशोरावस्था शैशवावस्था की पुनरावृति है।"
- "किशोर समाज सेवा के आदर्शों का निर्माण व पोषण करते है।"

किलपैट्रीक, "किशोरावस्था जीवन का सबसे कठिन काल है।"

स्टेनले हॉल, "किशोरावस्था संघर्ष, तनाव, तूफान की अवस्था है।"

स्किनर, "किशोर को निर्णय का कोई अनुभव नही है।"

क्रो एंड क्रो, "किशोर ही वर्तमान की शक्ति व भावी शक्ति की आशा को प्रदर्शित करता है।"

एरिक्शन, "किशोरावस्था में किशोर स्वयं के व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण चाहते है।"

Toppersnotes
Unleash the topper in you

किशोरावस्था की विशेषता

- दलभक्ति की अवस्था
- सामाजिक स्वीकृति की अवस्था
- सुनहरी अवस्था
- उथल-पुथल की अवस्था
- तार्किक चिंतन की अवस्था
- आत्म सम्मान एवं आत्म स्वीकृति की अवस्था
- व्यक्तिगत एवं घनिष्ठ मित्रता की अवस्था
- प्रबल दबाव, तनाव की अवस्था
- संवेगात्मक परिवर्तन की अवस्था
- द्रुत एवं तीव्र विकास की अवस्था
- शारीरिक व मानसिक विकास में तीव्रता (बिग एवं हंट)
- ईश्वर व धर्म में विश्वास
- समाजसेवा की भावना
- अपराधि प्रवृति का विकास
- स्थिरता एवं समायोजन का अभाव
- व्यवहार में भिन्नता
- चहुमुखी विकास
- वीर पूजा
- विषमलिंगी सद्भावना
- दिवास्वप्न की अधिकता
- प्रतियोगी भावना एवं नेतृत्व करना
- अनैतिक कार्य एवं आत्महत्या करना

किशोरावस्था के उपनाम

- जीवन की बसन्त ऋतु
- जीवन का स्वर्ण काल
- Teen Age
- समस्या समाधान की आयु
- संक्रमण की आयु
- जीवन का सबसे कठिन काल किलपैट्रिक
- देवदूत अवस्था
- वीर पूजा की प्रवृत्ति
- देशभक्ति की भावना
- दबाव, तूफान व संघर्ष की अवस्था
- सर्वाधिक काम प्रवृत्ति
- समायोजन का अभाव

Toppersnotes
Unleash the topper in you

2 CHAPTER

विकास को प्रभावित करने वाले कारक

बालक का विकास एक सतत प्रक्रिया है, जो वंशानुक्रम और वातावरण के परस्पर प्रभाव से संचालित होता है। हालांकि, कुछ ऐसे विशिष्ट कारक होते हैं जो इस प्रक्रिया को गति देते हैं अथवा उसे अवरुद्ध करने के कारक बनते हैं। ये कारक जन्मपूर्व अवस्था से लेकर बालक की समूची वृद्धि यात्रा को प्रभावित करते हैं। इन कारकों का विवरण निम्नलिखित है:

- **पोषण**
  - ✓ पोषण किसी भी बालक के विकास में आधारभूत भूमिका निभाता है। गर्भकाल से लेकर किशोरावस्था तक उत्तम पोषण बालक के शारीरिक और मानसिक विकास हेतु अनिवार्य होता है। संतुलित आहार में समुचित मात्रा में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन तथा खनिज लवण की उपस्थिति आवश्यक होती है। यदि पोषण अपर्याप्त हो तो बालक की वृद्धि मंद हो जाती है, जिससे उसका सीखने, खेलने और सामाजिक समायोजन का स्तर प्रभावित होता है।
- **बुद्धि**
  - ✓ बालक की बौद्धिक क्षमताएँ उसके संपूर्ण विकास को दिशा देती हैं। जिन बालकों में तीव्र बुद्धि पाई जाती है, वे न केवल तेजी से सीखते हैं बल्कि नई स्थितियों में जल्दी समायोजित भी होते हैं। टर्मन ने स्पष्ट किया कि प्रखर बुद्धि वाले बालक 13वें माह में चलने और 11वें माह में बोलने लगते हैं जबकि मंद बुद्धि वाले बालकों में ये क्षमताएँ 30वें और 15वें माह में प्रकट होती हैं।
- **यौन भेद**
  - ✓ लड़कियाँ और लड़के विकास की भिन्न गति से गुजरते हैं। जन्म के समय लड़के कुछ अधिक लम्बे होते हैं, लेकिन किशोरावस्था में लड़कियाँ तेजी से वृद्धि करती हैं और वे लड़कों की तुलना में जल्दी परिपक्वता प्राप्त कर लेती हैं। यह भेद न केवल शारीरिक वरन् मानसिक विकास पर भी प्रभाव डालता है।
- **अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियाँ**
  - ✓ मानव शरीर में उपस्थित ग्रन्थियाँ जैसे थॉयरॉइड, पिट्यूटरी, गोनाड्स आदि हार्मोन स्त्रवित करती हैं जो शरीर के विविध कार्यों को नियंत्रित करते हैं। थॉयरॉक्सिन शारीरिक व मानसिक विकास में सहायक होता है। इन ग्रन्थियों की अधिक या कम क्रियाशीलता से विकास असामान्य हो सकता है। उदाहरणस्वरूप, थाइमस की अति क्रियाशीलता से बचपन के लक्षण लंबे समय तक बने रहते हैं।
- **प्रजातीय भिन्नता**
  - ✓ कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि भिन्न प्रजातियों के लोगों में न केवल शारीरिक बनावट, वर्ण आदि में भिन्नता होती है, बल्कि मानसिक योग्यताओं में भी। हालांकि हरलॉक जैसे विद्वान इस मत को स्वीकार नहीं करते।
- **रोग एवं चोट**
  - ✓ गर्भकालीन अवस्थाओं में उत्पन्न बीमारियाँ या जन्म के बाद बालक को लगी चोटें उसके विकास को अवरुद्ध कर सकती हैं। शारीरिक रोगों के साथ-साथ मानसिक आघात भी बालक की सामाजिकता, आत्मविश्वास और समझने की क्षमता को प्रभावित करते हैं।

Unleash the topper in you

- **पारिवारिक वातावरण**
  - ✓ परिवार बालक का पहला सामाजिक संस्थान होता है। माता-पिता के आपसी संबंध, पालन-पोषण की शैली, बच्चों के प्रति व्यवहार, परिवार का आकार, सभी कुछ बालक के व्यक्तित्व निर्माण में भूमिका निभाते हैं। जिस परिवार में संवाद, सहयोग और स्नेह का वातावरण होता है, वहाँ बालक का सर्वांगीण विकास स्वाभाविक रूप से होता है।

विकास को प्रभावित करने वाले पारिवारिक कारक

- **अभिभावकों की अभिवृत्तियाँ**
  - ✓ अभिभावकों के व्यवहार से बालकों का मानसिक स्वरूप तैयार होता है। अति-संरक्षण बालकों को निर्भर बना देता है, जबकि तिरस्कार उन्हें आत्महीनता व आक्रामकता की ओर ले जाता है। कठोर अभिभावकत्व के कारण बालकों में शर्मीलापन, हीन भावना व अनिर्णय की प्रवृत्ति देखी जाती है।
- **परिवार का आकार**
  - ✓ मध्यम आकार का परिवार बालक के सर्वांगीण विकास हेतु उपयुक्त माना जाता है। छोटे परिवारों में संसाधनों की उपलब्धता अधिक होती है, जबकि बड़े परिवारों में प्रतिस्पर्धा और उपेक्षा की संभावना अधिक रहती है।
- **टूटे हुए परिवार**
  - ✓ जब माता या पिता में से कोई अनुपस्थित हो, मृत्यु हो या तलाक की स्थिति हो, तो बालक असुरक्षा और मानसिक अस्थिरता से ग्रसित हो सकता है। आर्थिक दबाव और भावनात्मक कमी उसका विकास अवरुद्ध कर सकती है।
- **माता-पिता का व्यवसाय**
  - ✓ पिता का सामाजिक पद और माता की व्यस्तता बालक के आत्मबोध, सामाजिक व्यवहार और अभिव्यक्ति को प्रभावित करती है। माँ के कार्यशील होने पर छोटे बच्चों को अकेलेपन की समस्या झेलनी पड़ सकती है।
- **सामाजिक-आर्थिक स्तर**
  - ✓ परिवार की आर्थिक स्थिति बालक की शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण और मानसिक स्थिरता पर सीधा प्रभाव डालती है। निम्न आर्थिक स्थिति वाले परिवारों के बालकों में हीन भावना का अनुभव आमतौर पर देखा गया है।
- **अभिभावकों का पक्षपात**
  - ✓ यदि किसी एक बालक को विशेष स्नेह और दूसरे को उपेक्षा मिलती है, तो इससे उपेक्षित बालक में ईर्ष्या, क्रोध और असंतुलन की प्रवृत्तियाँ पनपती हैं।
- **जन्म क्रम**
  - ✓ प्रथम संतान को अधिक अवसर व संसाधन मिलते हैं। इससे उनमें आत्मविश्वास व उत्तरदायित्व का स्तर अधिक होता है जबकि बाद में जन्मे बालकों में उपेक्षा की भावना पाई जा सकती है।

विकास को प्रभावित करने वाले विद्यालय संबंधी कारक

- **विद्यालय का वातावरण**
  - ✓ विद्यालय केवल शैक्षिक संस्था नहीं बल्कि व्यक्तित्व निर्माण का केंद्र होता है। बालक की रुचियाँ, मूल्यबोध और सामाजिक व्यवहार का आधार विद्यालय में ही पड़ता है।

- **नर्सरी और प्राथमिक शिक्षा**
  - ✓ नर्सरी शिक्षा बालकों में आत्मविश्वास, सामाजिक समायोजन और सृजनात्मकता को प्रारम्भिक अवस्था में ही विकसित करती है। प्रारम्भिक विद्यालय में समायोजन उन्हीं बालकों का सरल होता है, जिन्हें पहले अच्छा पारिवारिक वातावरण मिला होता है।
- **कक्षा का वातावरण**
  - ✓ सहयोगात्मक और प्रजातांत्रिक कक्षा वातावरण में बालकों में मित्रता, नेतृत्व और सहयोग की भावना का विकास होता है। जबकि कठोर या अराजक कक्षाओं में डर, विद्रोह और निष्क्रियता देखी जाती है।
- **अध्यापक-विद्यार्थी संबंध**
  - ✓ अध्यापक का व्यवहार बालकों पर गहरा प्रभाव डालता है। स्नेहशील शिक्षक प्रेरणादायक होते हैं जबकि कठोर व्यवहार बालकों में भय, विद्रोह या आत्महीनता की भावना को जन्म दे सकता है।
- **विद्यालय का अनुशासन**
  - ✓ प्रजातांत्रिक अनुशासन बालकों में आत्मसंयम, आत्मविश्वास और उत्तरदायित्व की भावना को बढ़ाता है। तानाशाही अनुशासन से वे संकोची, सशंकित और असहयोगी बन सकते हैं।
- **नैतिक और सामाजिक विकास में विद्यालय की भूमिका**
  - ✓ विद्यालय में बालक सामाजिक मूल्यों को व्यवहारिक रूप से सीखता है—जैसे सहयोग, उत्तरदायित्व, आत्मनियंत्रण, नेतृत्व, न्याय और सेवा। ये गुण उसकी आगे की सामाजिक यात्रा को सुगम बनाते हैं।

Toppersnotes
Unleash the topper in you

3 CHAPTER बाल विकास के सिद्धांत

मनोसामाजिक विकास सिद्धान्त (इरिक एरिक्सन)

- एरिक्सन ने अपनी पुस्तक "Childhood and Society" मे बालक का सामाजिक विकास महत्वपूर्ण माना है।
- एरिक्सन के सिद्धान्त में व्यक्तिगत, सांवेगिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकास को समन्वित रूप से प्रस्तुत किया।
- इन्होनें व्यक्तित्व विकास में व्यक्ति की सामाजिक अनुभूतियों के महत्व पर बल दिया।
- व्यक्तित्व विकास में इड के स्थान पर अहम को अधिक महत्व दिया।
- मनोसामाजिक सिद्धान्त निम्न पाँच तथ्यों पर आधारित है
  - ✓ विकास की प्रत्येक अवस्था में एक मनोसामाजिक चुनौती होती है जिसे संकट कहा जाता है। जो इसका समाधान कर लेता है उसका विकास उतना ही अच्छा होता है।
  - ✓ विकास विभिन्न अवस्थाओं में होकर गुजरता है।
  - ✓ सभी की मौलिक आवश्यकताएँ एक समान होती है।
  - ✓ विकास की विभिन्न अवस्थाओं में व्यक्ति की प्रेरणा का अन्तर होता है।
  - ✓ व्यक्ति में आत्म और स्व का विकास इनके प्रति की गयी अनुक्रिया का परिणाम है।
- इस सिद्धान्त को जीवन अवधि विकास सिद्धान्त भी कहा जाता है।
- एरिक्सन ने अपने सिद्धान्त को **आठ अवस्थाओं** में बाँटा है।
  - ✓ विश्वास बनाम अविश्वास — जन्म से 1 वर्ष
  - ✓ स्वायत बनाम लज्जा एवं शक — 1 से 3 वर्ष
  - ✓ पहल बनाम दोषीत्व — 3 से 5 वर्ष
  - ✓ परिश्रम बनाम हीनता — 6 से 12 वर्ष
  - ✓ पहचान बनाम संशयिती — 12 से 18 वर्ष
  - ✓ घनिष्ठता बनाम अलगाव — 18 से 35 वर्ष
  - ✓ जननात्मक बनाम स्थिरता — 36 से 55 वर्ष
  - ✓ सम्पूर्णता बनाम निराशा — 55/60 वर्ष से अधिक
- **विश्वास बनाम अविश्वास (जन्म से 2 वर्ष) :** इस अवस्था में बालक को माता-पिता का प्यार व स्वयत्तता मिलती है तो विश्वास पैदा होता है और अगर उसको परिवार में स्वतंत्रता एवं प्यार नही मिलता है तो उसमें अविश्वास पैदा हो जाता है। दोनो ही स्थिति में बालक संकट पैदा करती है। यदि बालक इस समस्या का सफलतापूर्वक समाधान कर लेता है तो उसमें एक मनोसामाजिक स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसे विश्वास कहा जाता है।
- **स्वायत्त बनाम लज्जा व शक (2-3 वर्ष) :** जिन बालकों पर उनके परिवार के सदस्यों को विश्वास हो जाता है तो वे उनके व्यवहार को मान्यता दे देते है। जिनसे उनमें स्वतन्त्रता एवं स्वायत्तता का गुण विकसित हो जाता है और जिन बालकों को परिवार में महत्व नही दिया जाता उनमें लज्जा का अनुभव करते है। लज्जा के कारण अपने कार्यों पर शक करने लगते है। इन दोनों का समाधान कर लेने पर उनमे इच्छा-शक्ति का गुण विकसित होता है।

Unleash the topper in you

- **पहल बनाम दोष (3-5 वर्ष) :** प्रारम्भिक बाल्यावस्था होती है। इसे प्री स्कूल की अवस्था भी कहते है। इस अवस्था में बालक बाह्य वातावरण में नयी-नयी उत्सुकता प्रदर्शित करता है। नयी-नयी खोज करता है। माता-पिता को ऐसे गुणों की सराहना करनी चाहिए। जो माता-पिता पहल की आलोचना करते है तो उनमे दोष उत्पन्न हो जाता है। इन दोनो का सफलतापूर्वक समाधान कर लेने से उनमे उद्देश्य नामक मनोसामाजिक गुण पैदा हो जाता है।
- **परिश्रम बनाम हीनता (5-12 वर्ष) :** यह उत्तर बाल्यावस्था है। इसमे बालक नवीन ज्ञान एवं सृजन एवं बौद्धिक कौशल को प्राप्त करने का प्रयास करता है। जिससे बालकों में परिश्रम का भाव विकसित होता है और असफल होने पर हीनता का शिकार हो जाते है। इसका समाधान कर लेने पर उनमें उद्देश्य का गुण विकसित हो जाता है।
- **पहचान बनाम संभ्रान्ति (12-18 वर्ष) :** यह किशोरावस्था का काल होता है। इस अवस्था कर्त्तव्य परायणता नामक गुण विकसित होता है।
- **घनिष्ठता बनाम अलगाव (18-40 वर्ष) :** इस अवस्था में "प्यार" नामक गुण विकसित होता है। इससे दूसरों के प्रति ईमानदारी एवं वफादारी करने का गुण विकसित होता है।
- **जननात्मक बनाम स्थिरता (40-65 वर्ष) :** यह वयस्कावस्था है। इसमें देखभाल नामक गुण विकसित होता है।
- **सम्पूर्णता बनाम निराशा (65+ उम्र) :** यह मनोसामाजिक विकास सिद्धान्त की अन्तिम अवस्था है। इसमें परिपक्वता का गुण विकसित होता है। इस अवस्था में नैराश्य का भाव होता है।

मनोसामाजिक सिद्धान्त का शिक्षा में उपयोग

- प्राथमिक विद्यालय के बालकों में परिश्रम का गुण विकसित किया जाना चाहिए।
- इस सिद्धान्त के अनुसार छोटे बच्चों को पहल का बढ़ावा देना चाहिए।
- बालकों में पहचान विकसित करनी चाहिए।

Unleash the topper in you

4 CHAPTER बाल विकास का अधिगम या सीखने से संबंध

अधिगम या सीखना

अधिगम या सीखना एक बहुत ही सामान्य और आम प्रचलित प्रक्रिया है। जन्म के तुरन्त बाद से ही व्यक्ति सीखना प्रारम्भ कर देता है और फिर जीवनपर्यन्त कुछ ना कुछ सीखता ही रहता है।

सामान्य अर्थ में 'सीखना' व्यवहार में परिवर्तन को कहा जाता है। परन्तु सभी तरह के व्यवहार में हुए परिवर्तन को सीखना या अधिगम नहीं कहा जा सकता ।

वुडवर्थ के अनुसार, "नवीन ज्ञान और नवीन प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करने की प्रक्रिया, सीखने की प्रक्रिया है। "

गेट्स एवं अन्य के अनुसार, "अनुभव और प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार में परिवर्तन लाना ही अधिगम या सीखना है।"

क्रो एवं क्रो के अनुसार, "सीखना या अधिगम आदतों, ज्ञान और अभिवृत्तियों का अर्जन है।"

क्रॉनवेक के अनुसार, "सीखना या अधिगम अनुभव के परिणाम स्वरूप व्यवहार में परिवर्तन द्वारा व्यक्त होता है।"

मॉर्गन और गिलीलैण्ड के अनुसार, "अधिगम या सीखना, अनुभव के परिणाम स्वरूप प्राणी के व्यवहार में कुछ परिमार्जन है, जो कम से कम कुछ समय के लिए प्राणी द्वारा धारण किया जाता है।"

अधिगम या सीखने की विशेषताएँ

- **सीखना : सम्पूर्ण जीवन चलता हैं।**
- **सीखना : परिवर्तन का एक रूप हैं -** व्यक्ति स्वयं और दूसरे के अनुभव से सीख कर अपने व्यवहार, विचारों, इच्छाओं, भावनाओं आदि मे परिवर्तन करता हैं।
- **सीखना : सार्वभौमिक हैं -** सीखने का गुण सिफर मनुष्य मे नहीं पाया जाता हैं वरन संसार के समस्त जीवधारियों मे यह गुण विद्यमान होता हैं ।
- **सीखना : सक्रिय हैं -** सक्रिय रूप से सीखना वास्तविक रूप से सीखना हैं । बालक तभी कुछ सीख सकता हैं, जब वह स्वयं सीखने की प्रक्रिया मे भाग लेता हैं।
- **सीखना : उद्देश्यपूर्ण हैं -** सीखना, उद्देश्यपूर्ण होता हैं, उद्देश्य जितना अधिक प्रबल होगा, सीखने की प्रक्रिया उतनी ही तीव्र गति से होगी ।
- **सीखना : विवेकपूर्ण हैं -** मर्सेल का कथन हैं कि सीखना, यांत्रिक कार्य के बजाय विवेकपूर्ण कार्य कार्य हैं। किसी कार्य को शीघ्रता और सरलता से सीखा जा सकता हैं जिसमे बुद्धि या विवेक का प्रयोग किया जाता हैं।
- **सीखना : अनुभवों का संगठन है -** सीखना न तो नए अनुभव की प्राप्ति हैं और न पुराने अनुभवों का योग, वरन यह नए और पुराने अनुभवों का संगठन हैं।
- **सीखना : विकास हैं -** व्यक्ति अपनी दैनिक क्रियाओं और अनुभवों द्वारा कुछ न कुछ सीखता हैं, और इससे उस व्यक्ति का शारीरिक और मानसिक विकास होता हैं।
- **सीखना : नया कार्य करना हैं -** वुडवर्थ के अनुसार - सीखना कोई नया कार्य करना हैं पर उसने उसमे एक शर्त लगा दी हैं उसका कहना हैं कि सीखना, नया कार्य करना तभी हैं, जबकि यह कार्य फिर किया जाए और दूसरे कार्यों मे प्रकट हो।
- **सीखना : अनुकूलन हैं -** सीखना, वातावरण से अनुकूलन करने के लिए आवश्यक हैं । सीखकर ही व्यक्ति, नई परिस्थितियों से अपना अनुकूलन कर सकता हैं । जब वह अपने व्यवहार को इनके अनुकूल बना लेता हैं, तभी वह कुछ सीख पाता हैं ।

अधिगम और विकास मे संबंध

अधिगम और विकास एक दूसरे के पुरक माने जाते हैं । अधिगम के बिना विकास असंभव हैं । दोनों कारकों मे अंतर संबंध का पाया जाना उसी प्रकार संभव हैं जैसे एक ही सिक्के के दो पहलू - अलग दिखते हुए भी एक ही सिक्के का हिस्सा हैं।। इनमे निम्नलिखित प्रकार के अंतर - संबंध पाए जाते हैं -

- **अधिगम मे विवरण :** प्रत्येक मानव प्राणी में अधिगम करने की एक सामान्य क्षमता होती है, लेकिन यह क्षमता हर व्यक्ति में समान नहीं होती। इस अधिगम क्षमता में अन्तर का कारण वैयक्तिक भिन्नताएँ होती हैं, जैसे व्यक्तित्व, रुचि, अभिवृत्ति, और व्यवहार के विभिन्न प्रतिमान। इसलिए, विभिन्न व्यक्तियों में अधिगम की प्रक्रिया और परिणाम में भिन्नता देखी जाती है। उदाहरण के लिए, एक छात्र गणित में जल्दी महारत हासिल कर सकता है, जबकि दूसरा छात्र भाषा में अधिक बेहतर होता है। यह अन्तर केवल परिपक्वता का फल नहीं है, बल्कि यह विकास और अधिगम दोनों का संयुक्त परिणाम होता है। कुछ योग्यताएँ जन्मजात होती हैं, अतः एक ही अधिगम के अवसर के बावजूद भी व्यक्तियों में अधिगम की मात्रा और गति अलग-अलग हो सकती है।
- **विकास की सीमाएँ :** विकास की एक निश्चित सीमा होती है, जिसके अनुसार ही प्रशिक्षण और अधिगम की प्रक्रिया निर्धारित की जानी चाहिए। यदि अधिगम की व्यवस्था व्यक्ति के विकास स्तर को ध्यान में रखकर की जाए, तो अच्छे और सफल परिणाम की उम्मीद की जा सकती है, अन्यथा अधिगम अधूरा या कम प्रभावी रह जाएगा। कैटेल और उनके सहकर्मियों ने इस बात को स्पष्ट किया है कि किसी भी प्रकार का अधिगम और समायोजन प्राणी की अंतर्निहित गुणों द्वारा सीमित होता है। उदाहरण के लिए, एक शिशु को जटिल गणितीय संकल्पनाएँ नहीं सिखाई जा सकतीं क्योंकि उसकी मानसिक परिपक्वता अभी इस स्तर तक नहीं पहुँची होती। गेसेल ने भी कहा कि पर्यावरणीय कारक विकास में सहायता कर सकते हैं, उसे गति दे सकते हैं और सुधार कर सकते हैं, पर वे विकास की मूल श्रृंखला को उत्पन्न नहीं कर सकते। कारमाइकल एवं मैकग्रा के अनुसार परिपक्वता (Maturity) और अधिगम (Learning) दोनों विकास (Development) के पूरक हैं, अर्थात् विकास की प्रक्रिया इन्हीं दोनों कारकों के सम्मिलन से निर्धारित होती है। इसे सूत्र रूप में व्यक्त किया गया है: $D = f (M \times L)$, जहाँ D विकास, M परिपक्वता, और L अधिगम को दर्शाता है।
- **अधिगम की समय सारणी :** विकास और अधिगम के बीच एक महत्वपूर्ण अन्तर यह भी है कि विकास के आधार पर अधिगम के लिए **समय सारणी** निर्धारित की जा सकती है। इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति तभी अधिगम कर सकता है जब वह उस सीखने के लिए तैयार या तत्पर हो। अधिगम के लिए तत्परता का निर्धारण विकासात्मक तत्परता के माध्यम से किया जाता है, जो यह संकेत देती है कि कब अधिगम करना संभव और उचित होगा। यदि व्यक्ति अधिगम के लिए तैयार नहीं होता, तो उस समय अधिगम कराने का प्रयास सफल नहीं होता। हरलॉक ने भी कहा है, "व्यक्ति तब तक अधिगम नहीं कर सकता जब तक वह अधिगम के लिए तैयार न हो। विकासात्मक तत्परता यह निर्धारित करती है कि कब अधिगम होना चाहिए और कब नहीं।"

- **उद्दीपन की आवश्यकता :** मानव जीवन में जो आनुवंशिक विशेषताएँ निहित होती हैं, उनका विकास केवल तभी संभव होता है जब सामाजिक अधिगम और उचित उद्दीपन उपलब्ध हों। यदि बालक को अधिगम के पर्याप्त अवसर और उद्दीपन प्रदान न किए जाएँ, तो उसकी विकास की गति अवरुद्ध हो सकती है। उदाहरण के लिए, यदि कोई बच्चा उपयुक्त शिक्षा, सामाजिक संपर्क, और प्रोत्साहन से वंचित रह जाता है, तो उसकी मानसिक और शारीरिक क्षमताओं का विकास प्रभावित होगा। अधिगम की प्रक्रिया के दौरान उत्तेजनाएँ (stimulation) बालक को सीखने के लिए प्रेरित करती हैं और उन्हें अधिक सक्षम बनाती हैं। इस प्रकार उद्दीपन का अभाव आनुवंशिक क्षमताओं को पूरी तरह विकसित होने से रोक सकता है, जिससे बालक की समग्र विकास क्षमता सीमित हो जाती है।

Toppersnotes
Unleash the topper in you